thearyasamaj.org

RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल. 0011/2012-14

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

मूल्य : 2 रु.
वर्ष : 71 अंक : 14
सृष्टि संवत् 1960853115
13 जुलाई 2014
दयानन्दाब्द 189
वार्षिक : 100 रू.
आजीवन : 1000 रू.
दूरभाष : 2292926, 5062726

जालन्धर

वर्ष–71, अंक : 14, 10/13 जुलाई 2014 तदनुसार 29 आषाढ़ सम्वत् 2071 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

भोग सामग्री के साथ जीव का शरीर में प्रवेश

–ले० स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

हरि मृजन्त्यरुषो न युज्यते सं धेनुभिः कलशे सोमो अज्यते।
उद्वाचमीरयति हिन्वते मती पुरुष्टुतस्य कतिं चित्परिप्रियं।।
–ऋ. 9/72/1

शब्दार्थ–अरुषः + न = इन्द्रियों की भान्ति **हरिम्** = हरणशील जीव को **मृजन्ति** = शुद्ध करते हैं, वह **कलशे** = शरीर रूप कलश में **धेनुभिः** = **धेनु** = इन्द्रियों के साथ **युज्यते** = युक्त होता है, जोड़ा जाता है और **सोमः** = ऐश्वर्य, भोगसामग्री **अज्यते** = प्राप्त कराई जाती है। तब वह **वाचम्** = वाणी का **उद्+ईरयति** = उच्चारण करता है **कति+चित्** = कुछ **पुरुष्टुतस्य** = अनेकों से तूयमान भगवान् का **परिप्रियः** = प्यारा होकर **मती** = मति से, बुद्धि से, **हिन्वते** = चेष्टा करता है।

व्याख्या– आत्मा को शुद्ध करो, जीव को पवित्र करो, सब ओर से यह ध्वनि आती है किन्तु कोई नहीं बताता, कैसे पवित्र करें? वेद संकेत करता है– **हरिं मृजन्त्यरुषो न** जैसे इन्द्रियों को शुद्ध किया जाता है वैसे ही आत्मा को भी शुद्ध करते हैं। इन्द्रियों की शुद्धि संयम से हो सकती है, जैसा कि मनुजी ने कहा है–

इन्द्रियाणां विचरतां विषयेष्वपहारिषु।
संयमे यत्नमातिष्ठेद्विद्वान् यन्तेव वाजिनाम्।। –मनु. 2/88

जैसे विद्वान समझदार स्वकार्यकुशल सारथि घोड़ों को नियम में रखता है, वैसे मन और आत्मा को कुमार्ग पर ले-जाने वाली विषयों में विचरती हुई इन्द्रियों के संयम= निग्रह में सब प्रकार से प्रयत्न करें, क्योंकि–

इन्द्रियाणां प्रसंगेन दोषमृच्छत्यसंशयम्।
संनियम्य तु तान्येव ततः सिद्धिं नियच्छति।। –मनु. 2/99

जीवात्मा इन्द्रियों के वश में पड़ कर निःसंदेह बड़े-बड़े दोषों को प्राप्त होता है और उन इन्द्रियों को संयत करने से सिद्धि को प्राप्त करता है। संयम का जब तक ज्ञान न हो, अनुष्ठान नहीं हो सकता, तात्पर्य यह कि आत्मा की शुद्धि के लिये ज्ञान तथा संयम, विद्या तथा तप दोनों की आवश्यकता है, जैसा कि मनु जी ने कहा है–

अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति।। –मनु. 5/109

जल से शरीर के अवयव शुद्ध होते हैं, मन सत्य से शुद्ध होता है, विद्या और तप से आत्मा की शुद्धि होती है और बुद्धि ज्ञान से– तृण से लेकर ब्रह्मपर्यन्त के विवेक से शुद्ध होती है।

इन्द्रियों के प्रसंग से चूंकि आत्मा विषयों में खींचा जा रहा है, अतः वेद ने उसे हरि नाम दिया।

भोग की अभिलाषा से, अथवा भोग की प्राप्ति की भावना से मनुष्य इन्द्रियों के वश में होकर मलिन होता है। वेद कहता है– अरे जीव! इस कार्य के लिये तू अपने को मलिन न कर, क्योंकि जहां तू इन्द्रियों=भोग के साधनों से युक्त करके शरीर में भेजा गया है, वहीं सोम= भोग सामग्री भी साथ ही भेजी गई है। तात्पर्य यह है कि जितना तेरे पूर्व कर्मों से अर्जित भोग है, वह तुझे अवश्य मिलेगा। उसमें न्यूनता या अधिकता नहीं हो सकती, फिर क्यों तू विषयवासना के फेर में पड़ कर अपना सत्यानाश करने लगा है?

विषयवासना अत्यन्त प्रबल होती है, यह आत्मा पर मानो पर्दा डाल देती है, आत्मा को कुछ सुझाई नहीं देता है। विषयवासना के कारण प्रकृति से संग बढ़ता है और मनुष्य भगवान से दूर होता जाता है। जितना प्रकृति से संग बढ़ता है, उतना इसमें ज्ञान प्रकाश क्षीण होने लगता है। किसी विरले के भाग्य जागते हैं और वह कुछ कुछ उस सर्वथा सर्वदा सर्व से स्तोतव्य भगवान का ध्यान, संग करता है, उसका प्यार पाने लगता है, तब उसकी मति सुधरती है। बुद्धि विषयवासना में परांगमुख होने लगती है, तब उसकी चेष्टाएं विवेकपूर्ण होने लगती हैं। मनुष्य जीवन यात्रा निर्वाह के लिये अपेक्षित भोगसामग्री की प्राप्ति के लिये ही पाप में प्रवृत्त होता है, यदि यह दृढ़निश्चय हो जाए कि भोग अवश्य प्राप्त होगा तो मनुष्य पाप से हट जाएगा।

इस निश्चय का साधन सर्वव्यापक सर्वज्ञ भगवान को कर्मफल प्रदाता जानने– मानने से हो सकता है। भगवान को इस रूप में मानने से मनुष्य छिप कर कर्म करने की चेष्टा नहीं कर सकता, उसे भगवान के सर्वत्र विद्यमान होने का ज्ञान है। ज्ञानवान् यदि सर्वत्र विद्यमान है तो उसका ज्ञान भी सर्वत्र, अर्थात सर्व पदार्थों के विषय में अवश्य होता है, अर्थात् किस कर्म का परिणाम-फल क्या हो, इसका उसे पूरा ज्ञान है। इसके कर्मफल ज्ञान की सफलता कर्मफल प्रदान में है अर्थात भगवान सर्वव्यापक, सर्वज्ञ होता हुआ यथातथ्यरूप से कर्मफल विधान करता है। इस निश्चय के दृढ़, अविचल होते ही मनुष्य की पाप वासनाएं जल जाती हैं किन्तु मनुष्य का नैसर्गिक अज्ञान उसे पुनः पाप गर्त में गिराने की सामग्री प्रस्तुत कर देता है। इससे बचने का उपाय सर्वज्ञाननिधान भगवान का ध्यान है। जैसा कि मनुजी ने कहा है–

ध्यानेनानीश्वरान् गुणान्।

–स्वाध्याय संदोह से साभार

thearyasamaj.org

ईश्वर, वेद, महर्षि दयानन्द और मूर्तिपूजा

-ले० मनमोहन कुमार आर्य 196 चक्खूवाला-2 देहरादून

महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्य समाज नामक संस्था व संगठन के संस्थापक हैं। उन्होंने 10 अप्रैल सन् 1875 को मुम्बई में प्रथम आर्य समाज की स्थापना की थी। आर्य समाज की स्थापना का उद्देश्य समाज, देश व विश्व से अज्ञान, अन्धविश्वास, कुरीति, अधर्म, अन्याय, शोषण, पक्षपात, ईश्वर की गलत विधि से पूजा व उपासना आदि को दूर करने के लिए की थी। इसके साथ उनका उद्देश्य था कि सारे संसार के सभी मनुष्य सत्य को ग्रहण व असत्य का त्याग करें तथा अविद्या का नाश व विद्या की वृद्धि करें। आर्य समाज के 10 नियम हैं जो संसार की सभी संस्थाओं व संगठनों से उत्कृष्ट व मानव जाति के लिए सर्वाधिक हितकर हैं। इसके बाद भी संसार के लोगों ने यदि आर्य समाज को पूर्ण रूप से नहीं अपनाया है तो इसके पीछे उन मनुष्यों व उनके धार्मिक, सामाजिक व राजनैतिक नेताओं का अज्ञान व स्वार्थ है। आज हम देख रहे हैं कि सारे संसार के सभी मतों व पन्थों में अनेक बातें अज्ञान व अविद्या से पूर्ण हैं जिससे मनुष्यों को भारी हानि हो रही है। यहां तक की आज के उच्च-शिक्षित मनुष्यों को स्वयं अर्थात् आत्मा का भी पूर्ण ज्ञान नहीं है। ईश्वर का जितना ज्ञान है वह भी आधा-अधूरा व अधिकांश मिथ्या ज्ञान है। ईश्वर कैसा है ? ईश्वर वह है जिससे यह सृष्टि व ब्रह्माण्ड अस्तित्व में आता है। उस ईश्वर का स्वरूप सत्य, चित्त व आनन्दयुक्त, सर्वव्यापक, निराकार, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, अजन्मा, अमर, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, अजर, अभय, नित्य, पवित्र व सृष्टि को बनाना, चलाना व प्रलय करना है। यह ईश्वर का वास्तविक स्वरूप है, परन्तु यह स्वरूप सभी मत व पन्थों की पुस्तकों में नदारद ही है। ईश्वर कर्मों का फल प्रदाता है। पाप क्षमा नहीं होते। यदि वह क्षमा करता है तो वह न्यायकारी नहीं रहेगा जबकि अनेक मत सस्ती लोकप्रियता के लिए स्वीकार करते हैं कि उनके मत को ग्रहण कर लेने, अर्थात् धर्मान्तरण करने पर, उनके पाप क्षमा कर दिये जाते हैं। हमें लगता है कि इससे बड़ा असत्य या झूठ संसार में और कुछ नहीं हो सकता है। यह ईश्वर पर एक प्रकार से झूठा आरोप है। ऐसी अनेकानेक अज्ञानपरक बातें संसार के सभी मत, पन्थ व सम्प्रदायों में पाई जातीं हैं। इनसे यदि कोई मुक्त है तो वह केवल एक ही संस्था व संगठन है जिसका नाम "आर्य समाज" है। 'आर्य' का अर्थ होता है कि श्रेष्ठ गुण, कर्म व स्वभाव से युक्त मनुष्य। जिस मनुष्य के गुण, कर्म व स्वभाव, आचार व विचार, उसका ईश्वर, आत्मा व प्रकृति का ज्ञान, उपासना आदि श्रेष्ठ व सत्य हैं, वह मनुष्य या व्यक्ति, स्त्री वा पुरुष आर्य संज्ञा का अधिकारी है। अंग्रेजी में ऐसे मनुष्य को हम gentleman कह सकते हैं।

महर्षि दयानन्द जब सन् 1863 में अपने गुरू प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द सरस्वती की आज्ञा से कार्य क्षेत्र में उतरे तो उन्होंने विचार किया कि किस प्रकार से अज्ञान के अन्धकार को दूर किया जाये। उस समय देश गुलामी का जीवन व्यतीत कर रहा था। 5 या 6 वर्ष पहले ही सन् 1857 की क्रान्ति हो चुकी थी जो कि अनेक कारणों से विफल रही। स्वामी दयानन्द ने उस क्रान्ति के विफल होने पर भी विचार किया। उन्होंने पाया कि देश में मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलित ज्योतिष, बाल विवाह, बेमेल विवाह, अशिक्षा, अज्ञान, जातीय एकता व संगठन का अभाव, नाना प्रकार के मत-सम्प्रदाय, नाना प्रकार के धर्म पुस्तक, नाना प्रकार की परस्पर विरोधी धार्मिक व सामाजिक मान्यतायें, राजनैतिक सोच, चिन्तन व संगठन का अभाव आदि गुलामी, दासता व पराधीनता के मुख्य कारण थे। उन्होंने विचार मन्थन में पाया कि मूर्ति पूजा यदि समाप्त हो जाती है तो लोग सच्चे ईश्वर की उपासना में प्रवृत्त होगें जिससे बुद्धि व ज्ञान में वृद्धि होगी और अन्य सभी समस्यायें स्वत: ही समाप्त हो जायेगीं या उनका हल मिल जायेगा।

अतः उन्होंने पुनः पुनः वेदों का आलोड़न किया और वह आश्वस्त हो गये कि चारों वेदों में मूर्ति पूजा का कहीं विधान नहीं है। युक्तियों, तर्क आदि प्रमाणों से भी मूर्तिपूजा को उचित या जायज नहीं ठहराया जा सकता। अत: उन्होंने धर्म की नगरी काशी की ओर प्रस्थान किया और काशी के पण्डितों को मूर्तिपूजा को वेद सम्मत सिद्ध करने के लिए ललकारा। इधर महर्षि दयानन्द पण्डितों को ललकार रहे थे और दूसरी ओर सभी पण्डित वेदों के ज्ञान से शून्य थे। उनमें वेदों का अध्ययन करने के लिए आवश्यक आर्ष व्याकरण के साथ योग, उपासना, ध्यान आदि में गति न होने के कारण वह वेदों के तात्पर्य को समझने में पूरी तरह से अक्षम व असमर्थ थे। एक यह भी धर्म संकट था कि यदि वेद की माने तो आजीविका छिन जाती है और मूर्तिपूजा करके उनके वारे-न्यारे हो रहे थे। इससे देश पतन व रसातल में जा चुका था और यदि कुछ बचा था तो वह भी शीघ्र ही समाप्त होने की स्थिति में था।

ऐसी विषम स्थिति में हमारा देश व इसका धर्म व संस्कृति थी। काशी के राजा ईश्वरी नारायण सिंह काशी के पण्डितों व विद्वानों के पोषक व उनके पालक थे। महर्षि दयानन्द की मूर्तिपूजा को वेद सम्मत सिद्ध करने की ललकार से उनकी गरिमा घट रही थी। ऐसी स्थिति में उन्होंने शीर्षस्थ पण्डितों, स्वामी विशुद्धानन्द आदि को बुलाकर स्वामी दयानन्द को समुचित उत्तर देने को कहा। कहीं न कहीं राजा के मन में भी खटका था कि महर्षि दयानन्द का पक्ष सत्य है। अत: सभी येन-केन-प्रकारेण स्वामी दयानन्द का विरोध करने पर उतारू हो गये। मूर्तिपूजा पर काशी में शास्त्रार्थ के दिन 16 नवम्बर, सन् 1969 को शास्त्रार्थ स्थल आनन्द बाग में लगभग 50,000 दर्शकों की भीड़ इकट्ठी हो गई। काशी के इतिहास में सम्भवतः अपने प्रकार का यह पहला ऐतिहासिक शास्त्रार्थ था। एक ओर महर्षि दयानन्द अकेले थे तो दूसरी ओर पण्डितों की फौज थी। शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ। काशी के पण्डितों ने स्वामी दयानन्द को उलझाना चाहा परन्तु उसमें भी वह असफल रहे। काशी के पण्डितों के यह घोषित करने पर कि हमें सभी शास्त्र स्मरण हैं, स्वामी दयानन्द ने उन्हें धर्म के स्मृति में दिए गए लक्षण बताने को कहा। वह भी निरूत्तर होने के कारण चुप रहे। घोर आश्चर्य है कि काशी के शीर्षस्थ पण्डितों को न धर्म के लक्षण ज्ञात थे न अधर्म के। उनकी यह प्रतिज्ञा कि उन्हें सभी शास्त्र स्मरण है, के भंग होने से उनकी एक हार तो हो गई। अब मूर्तिपूजा को वेद सम्मत सिद्ध करने का अवसर था। उन पण्डितवर्ग के पास कोई मूर्तिपूजा के समर्थन में वेद का कोई प्रमाण नहीं था और न ही उनमें से किसी ने प्रस्तुत ही किया। इस प्रकार महर्षि दयानन्द ने अपने वेदों के अथाह ज्ञान से काशी के सभी पण्डितों को, उन्हीं के दुर्ग में, मूर्तिपूजा का वेद में विधान न होने पर, मूर्तिपूजा को अनुचित सिद्ध कर दिया। इस प्रकार से उन दिनों देश व विदेशों में प्रचलित सबसे बड़ा अन्धविश्वास "मूर्तिपूजा" धराशायी हो गया और आज तक वह धराशायी है। सत्य का समर्थन व असत्य का खण्डन करने वाले महर्षि दयानन्द पर पत्थर व मिट्टी के गोले फेंके गये। उनके प्राण लेने के प्रयत्न भी किये गये परन्तु ईश्वर की कृपा से वह इस दुर्घटना में बाल-बाल बंच गये। हम सनातन धर्मी कहलवाने वाली इस हिन्दू जनता को क्या कहें जो उस असिद्ध, वेद-विरूद्ध व युक्ति-तर्क विरूद्ध ईश्वर की मूर्तिपूजा वा उपासना को किये चली जा रही है। इसे हम अपना व देश का दुर्भाग्य मानते हैं। इसी प्रकार से अन्य अन्ध-विश्वास अवतारवाद, फलित ज्योतिष, अशिक्षा आदि भी पल्लवित और पुष्पित हो रहे हैं। शिक्षा में नैतिकता समाप्त होकर नैतिकता, धर्म व सामाजिक मूल्यों का स्थान आधुनिकता व पाश्चात्य की मूल्य-विहीन शिक्षा व कुसंस्कारों ने ले लिया है। मूल वैदिक धर्म व प्राचीन संस्कारों से युक्त संस्कृति पर अस्तित्वहीन होने के खतरे मंडरा रहे हैं। क्या आने वाले समय व युगों में वैदिक धर्म सुरक्षित रह पायेगा, इसका उत्तर देना अत्यन्त कठिन है।

(शेष पृष्ठ 6 पर)

thearyasamaj.org

सम्पादकीय......

राष्ट्र का उत्थान कौन कर सकता है?

चरित्र के विकास के लिए इच्छा शक्ति का होना बहुत आवश्यक है। जिसमें इच्छा शक्ति का अभाव होता है, वह व्यक्ति उन्नति नहीं कर सकता। जो अपने संकल्पों पर दृढ़ नहीं रह सकता, जिसका अपना कोई स्थाई सिद्धान्त नहीं होता, जो अपनी बुद्धि का सदुपयोग नहीं करता, उस व्यक्ति में इच्छा शक्ति का अभाव होता है। ऐसे मनुष्य किसी भी बड़े कार्य को करने में अक्षम होते हैं। ऐसे व्यक्ति किसी का भला नहीं कर सकते। ऐसे व्यक्तियों से अपना भला नहीं होता तो वे समाज का क्या भला कर सकते हैं। एक चरित्रवान व्यक्ति के लिए दृढ़ इच्छाशक्ति का होना आवश्यक है। बालकों को अपना निर्माण करने का अवसर देना चाहिए। जो लोग उन्हें अपना आत्मनिर्माण करने का मौका नहीं देते, कठिनाईयों को सहन करने का अवसर नहीं देते, ऐसे लोग उनके चरित्र विकास तथा उन्नति में सबसे बड़े बाधक बनते हैं।

राष्ट्र की उन्नति के लिए चरित्रवान युवा पीढ़ी का होना अति आवश्यक है। युवा पीढ़ी किसी भी राष्ट्र की अमूल्य सम्पत्ति होती है। जो इस युवा पीढ़ी को बर्बाद कर देता है, नशे की दलदल में ढकेल देता है, वह राष्ट्र कभी भी उन्नति नहीं कर सकता। वर्तमान समय में युवा पीढी को नशे से बचाने की सबसे बड़ी आवश्यकता है। आज की युवा पीढ़ी को उसके कर्त्तव्य का बोध कराने वाला कोई नहीं है। स्कूल में भी इस प्रकार की शिक्षा नहीं मिल रही है जिससे विद्यार्थी के अन्दर अच्छे गुण विकसित हो, उसके अन्दर नैतिक मूल्यों की वृद्धि हो। आज की युवा पीढी को चरित्रवान बनाने के लिए माता-पिता और अध्यापकों को अपनी जिम्मेदारी को समझना होगा। किसी भी बालक के जीवन निर्माण में उसके माता-पिता और अध्यापकों की प्रमुख भूमिका रहती है। जो इस भूमिका को निभाते हैं, अपने कर्त्तव्य का वहन करते हैं, वे राष्ट्र की उन्नति और तरक्की में अपना योगदान देते हैं। इसलिए माता पिता और अध्यापकों का कर्त्तव्य है कि वे अपने-अपने कर्त्तव्यों को निभाते हुए बालक और बालिकाओं में ऐसी इच्छा शक्ति उत्पन्न करें, ऐसा आत्मविश्वास जागृत करें जिससे वे कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी अपने पथ से विचलित न हो सके। आत्मविश्वास से युक्त बालक असम्भव से असम्भव कार्य को करने की क्षमता रखता है। किसी कवि ने कहा है कि संसार में तीन प्रकार के मनुष्य हैं- उत्तम, मध्यम और निम्न। निम्न व्यक्ति विघ्नों से भय से किसी कार्य को प्रारम्भ ही नहीं करते। मध्यम प्रकार के व्यक्ति कार्य को प्रारम्भ तो कर देते हैं परन्तु विघ्न आने पर उस कार्य को बीच में ही छोड़ देते हैं। उत्तम श्रेणी के व्यक्ति कार्य को प्रारम्भ करके तब तक नहीं छोड़ते जब तक कार्य सिद्धि नहीं हो जाती। उत्तम प्रकार के व्यक्तियों की इच्छा शक्ति प्रबल होती है। इस इच्छा शक्ति के आधार पर ही वे संसार में महान कार्य कर जाते हैं और संसार में अमर हो जाते हैं। इच्छा शक्ति एक बहुत बड़ी ताकत है। एक प्रसिद्ध कहावत है कि जहां इच्छा होती हैं वहां राह निकल ही आती है। जिस परिस्थिति में बहुत बड़ी शारीरिक शक्ति से सम्पन्न किन्तु दुर्बल इच्छा शक्ति से व्यक्ति घबरा जाते हैं वहां प्रबल इच्छा शक्ति से मनुष्य दुर्बल शरीर होते हुए भी चट्टान की तरह दृढ़ रहता है। महाराणा प्रताप, वीर शिवाजी, स्वामी दयानन्द, महात्मा गांधी, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस आदि कठिन परिस्थितियों में संघर्ष करते हुए संसार में अपना नाम अमर कर गए हैं।

जीवन में कई अवसर आते हैं जब हमारे सामने निर्णय लेना कठिन हो जाता है। अनिश्चय की स्थिति में मनुष्य की समझ में कुछ नहीं आता। मनुष्य सोचता है, विचारता है, सभी प्रकार की युक्तियों का सहारा लेता है और तब अन्तर्द्वन्द के पश्चात किसी एक निर्णय पर पहुंचता है। यह निर्णय हमारी इच्छा शक्ति करती है। युद्ध के लिए तैयार अर्जुन के सामने एक समय ऐसा ही संकट उत्पन्न हुआ था। उसके सम्मुख प्रश्न था कि वह धर्म युद्ध करके अपने आत्मीय जनों की हत्या करे या आत्मीयता के मोह में पड़कर अपने कर्त्तव्य से विमुख हो जाए। सोचा समझा, योगेश्वर श्री कृष्ण के उपदेश को सुना और अन्त में निश्चय किया कि मैं युद्ध में भाग लेकर अपने क्षत्रिय धर्म का पालन करूंगा।

अच्छे चरित्र के निर्माण के लिए इच्छा शक्ति का होना अति आवश्यक है। जो व्यक्ति दृढ़ निश्चय नहीं कर पाता, जो अपने किसी कार्य को तन्मयता के साथ नहीं करता, उसका व्यक्तित्व प्रभावहीन होता है तथा चरित्र दुर्बल होता है। दृढ़ इच्छा शक्ति के द्वारा मनुष्य अपने जीवन में परिवर्तन ला सकता है। जिस व्यक्ति को नशे का सेवन करने या किसी प्रकार के दुर्व्यसन की आदत पड़ गई हैं, ऐसे मनुष्य भी दृढ़ इच्छा शक्ति के द्वारा इस आदत से छुटकारा पा सकते हैं। मनुष्य अगर अपनी इच्छा शक्ति को दृढ़ बना ले और संकल्प धारण कर ले तो असम्भव कार्य को भी सम्भव बना लेता है। नीतिकारों का कहना है कि मनुष्य के सभी कार्य दृढ़ इच्छा शक्ति और पुरूषार्थ से ही सम्पन्न होते हैं। जो व्यक्ति किसी लक्ष्य को लेकर संकल्प करते हैं और उसे पूरा करने के लिए अपना सर्वस्व समर्पित कर देते हैं ऐसे मनुष्य ही राष्ट्र की उन्नति में सहायक होते हैं और राष्ट्र का गौरव बनते हैं। आने वाली पीढ़ियां ऐसे लोगों को अपना आदर्श बनाती हैं और उनके मार्ग का अनुसरण करती हैं। वही राष्ट्र उन्नति कर सकता है जिस राष्ट्र के लोग दृढ़ इच्छा शक्ति से युक्त तथा चरित्रवान होते हैं। ऐसे लोगों के द्वारा राष्ट्र का गौरव बढ़ता है।

आज हमारे देश के नवयुवक इन्जीनियरिंग, विज्ञान, कृषि आदि सभी क्षेत्रों में उन्नति कर रहे हैं परन्तु दुर्भाग्यवश भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी और बेईमानी बढ़ रही है। इसका एकमात्र कारण यह है कि नवयुवकों के चरित्र निर्माण की ओर किसी का ध्यान नहीं है। कभी हमारा देश जिस चरित्र की महानता के लिए विश्व में प्रसिद्ध था आज उसी देश के चारीत्रिक मूल्यों का दिन-प्रतिदिन पतन हो रहा है। चारीत्रिक मूल्यों का पतन होने के कारण ही हमारा सांस्कृतिक पतन हो रहा है, हमारे नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। चरित्र के नष्ट हो जाने से सब कुछ नष्ट हो जाता है। अत: आज देश के गिरते हुए नैतिक स्तर को उठाने के लिए बालकों का चरित्रवान बनना परमावश्यक है और यह तभी सम्भव है जब माता-पिता और अध्यापक अपने-अपने कर्त्तव्यों का पालन करें और ऐसी शिक्षा दें जो उनके चरित्रवान बनने में सहायक बन सके।

-प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

thearyasamaj.org

वैदिक राष्ट्र

ले० डा. रविदत्त शर्मा एम.ए. (वेद) आर्य समाज शामली

संस्कृत की राज धातु से राष्ट्र शब्द बनता है; जिसका अर्थ है- शोभावाला। राष्ट्र वही है जो भूतल पर सुशोभित हो। वैदिक राष्ट्र सम्पन्नता का प्रतीक है। जिसके सभी निवासी सुख का अनुभव करते हों, उत्पादन भरपूर हो, खाद्यान्नादि की आत्मनिर्भरता हो, सुरक्षा के सभी साधन मौजूद हों न्यायव्यवस्था पक्षपात रहित हो, सभी के लिये एक-सा कानून हो, कृषि एवं पशुपालन ठीक प्रकार से होता हो, राष्ट्र नीति प्रशंसित हो, राष्ट्र का प्रत्येक नागरिक अपने अधिकारों तथा कर्त्तव्यों की जानकारी रखता हो, पृथिवी तथा अन्तरिक्ष पर किसी दूसरे का अधिकार न हो, सीमाएँ निर्विवाद तथा पूर्ण सुरक्षित हों तथा प्रजापालन ठीक-ठीक हो रहा हो ये पहचान राष्ट्र की है। अथर्ववेद में कुछ मुख्य तत्वों का उल्लेख किया गया है जिन्हें राष्ट्र का आधार कहा जा सकता है-'**सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।**'

अथर्व० १२.१.१

सत्य-ऋत-उग्र-दीक्षा-तप-ब्रह्म-यज्ञ ये सब किसी राष्ट्र को धारण करते हैं बृहत् सबका विशेषण है। बृहत् का अर्थ है विशाल या बहुत मात्रा में ये सब बातें हों।

सत्यम्-सत्य का व्यवहार, सत्य का आचरण, सत्य भाषण, सत्य कल्पनाएँ, सत्यनीति, सत्यनिर्देश तथा सत्य का प्रचार।

ऋत्वम्-न्याय व्यवस्था, कानून व्यवस्था तथा नियमों का कठोरता से पालन।

उग्रम्-शौर्य, तेज, साहस, सुदृढ़ सैन्य व्यवस्था, दण्ड विधान एवं अदम्यता।

दीक्षा-भाँति-भाँति के प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था व नागरिक को योग्य बनाना।

तपः-कर्त्तव्य का पालन, श्रम, सहनशीलता तथा स्वाध्याय।

ब्रह्म-विद्या का प्रचार, ज्ञानियों का संरक्षण, आस्तिक्य बुद्धि, शिक्षा समिति का गठन।

यज्ञः-नव-निर्माण, नये-नये आविष्कार, अनुसन्धान, अन्तर्राष्ट्रीय आदान-प्रदान, आयात-निर्यात, उत्पादन क्षमता।

यजुर्वेद के अनुसार वैदिक राष्ट्र की कल्पना एक मन्त्र में अवलोकनीय है-

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणों ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूर इषुव्योऽति व्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।। यजु-२२०२२

परमात्मा से प्रार्थना की गयी है-हे प्रभो हमारे राष्ट्र में ब्राह्मण ब्रह्मतेज सम्पन्न हों। क्षत्रिय शूर, धनुर्धर, संकट को दूर करने वाले एवं महारथी होंवे। गायें बहुत दूध देने वाली होवें। बैल बोझा ढोने में समर्थ हों। घोड़े शीघ्र पहुँचाने वाले हों। स्त्री कुल को धारण करने वाली हो। यजमानपुत्र विजय की इच्छा रखने वाला तथा सभ्य (सभा में बैठने योग्य) हो। वह युवा (कर्मशील) तथा वीर हो। बादल समय पर वर्षा करें। औषधियाँ फल वाली हों तथा योगक्षेम ठीक प्रकार से चलता रहे।

राष्ट्र का भार ऐसे नेता को दिया जाय जो तथ्य को जाने, ऋत का अवलम्बन करे तथा विवेक के द्वारा अनृत का प्रतिकार करें। एक मन्त्र में संकेत मिलता है कि असुरों की माया समाप्त हो गयी और तुम (राजा) मेरे जैसे सज्जनों की कामना करते हो इसी नीति से ऋत से अनृत को समाप्त करते हुए मेरे राष्ट्र के अधिपति बनो-

निर्माया उ त्ये असुरा अभूवन् त्वं च मा वरूण कामयासे।

ऋतेन राजन्ननृतं वि विञ्चन् म म राष्ट्रस्याधिपत्यमेहि।।

ऋ० १०-१२४.५

राजा राष्ट्र के स्वरूप का निर्धारण करता है। राष्ट्र में राजा की ऐसी भूमिका होती है जैसे परिवार में पिता की। प्रजा का संरक्षण करना उसका मुख्य कर्त्तव्य है। राष्ट्र का स्वामित्व ऐसे व्यक्ति पर न चला जाय जो चोर-डाकू-पापी-'मा व स्तेन ईशत माघशंसः'ओं। राजा अपने हितों को गौण तथा प्रजा के हितों को मुख्य समझे। राष्ट्र में विभिन्न वर्ग के व्यक्ति रहते हैं, सभी को यथाशक्ति सन्तुष्ट करना उसका काम है। वह ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शुद्र-म्लेच्छ-निषाद-जनजाति आदि सभी का राजा है। सम्मान की दृष्टि से वह सर्वोपरि है। पद की गरिमा गुणों से होती है। राजा तेजस्वी व प्रतापी हो तो विरोधी शक्तियों को दबा कर सुचारू रूप से व्यवस्था चला सकता है। विलक्षण बुद्धि वाला राजा राष्ट्र की समस्याओं का समाधान शीघ्र कर लेता है। शोषण करने वालों का तिरस्कार होना चाहिये; उन्हें तदनुकूल मायावी उपायों से नष्ट कर दिया जाय। ऐसा तभी सम्भव है जबकि दण्ड व्यवस्था कठोर हो।

राष्ट्र की एक विशेषता यह है कि दूत का चयन ठीक प्रकार से किया जाय। दूत की योग्यता के सम्बन्ध में वेद का परामर्श इस प्रकार है-

अग्निं दूतं वृणीमहे होतारं विश्ववेदसम्।

अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम्।। ऋ० १.१२.१

'विद्वान् को दूत के लिये वरण करते हैं जो सत्कर्मों का अनुष्ठान करने वाला हो, सब कुछ जानने वाला हो तथा राष्ट्र-यज्ञ का कर्ता हो।' अग्नि का भाव है विवेकशील, पवित्र आचरण वाला, नेतृत्व में सक्षम और राष्ट्र की उन्नति करने वाला हो। 'होता' शुभकर्मों का करने वाला हो। विश्व वेदसम् अर्थात् सब कुछ जानने वाला, सम्पूर्ण विद्याओं तथा नीतियों को जानने वाला हो। राज्यकार्य का अनुभवी और राष्ट्रीय व्यवहारों को जानने वाला हो।

शत्रुनीति के सम्बन्ध में वेद का संकेत है कि न तो द्युलोक में और न पृथिवी पर कोई शत्रु विद्यमान रहे न सीमाओं। शत्रु का विनाश करके उसे धर दबाने का बल होवे। सैनिक शत्रु को परास्त करें। सैन्यशक्ति पुष्ट हो ऐसा प्रयास किया जाय-

न हि वः शत्रुर्विवेद अधिद्यवि न भूम्यां रिशादसः।

युष्माकमस्तु तविषी तना युजा रूद्रासो नू चिदाधृषे।।

ऋ० १.३८.४

कोई दुष्ट अनायास ही राष्ट्र पर अधिकार न कर बैठे इस विषय में भी सावधान रहना आवश्यक है। राष्ट्र विघातक शक्ति को वेद में वृत्र कहा गया है, साथ ही वह असुर भी है। ऐसे वृत्र को सभी संगठित होकर मार डालें, आसुरी शक्ति राष्ट्र में पनपती नहीं चाहिये; कहीं दुष्ट शासक न बन बैठें-

हत वृत्रं सुदानव इन्द्रेण सहसा युजा।

मा नो दुःशंस ईशत।।

ऋ० १.२३.८

सैनिकों का कर्त्तव्य है कि राष्ट्र में भ्रष्टाचार फैलाने वालों को समूल नष्ट कर देवें। राष्ट्र में कहीं भी दुष्टों को संरक्षण न मिले। दुष्टों का वध करना राजा का, सैनिकों का तथा प्रजा का धर्म है। वैसे राजा को सोम बताया गया है परन्तु साथ ही वृत्रहा भी है। सौम्य गुण युक्त होने पर दुष्टों का तत्काल विनाश करने वाला हो। वेद में उपदेश दिया गया है कि चुगली करने वाला, मिथ्या भाषी या पापी हो तो उसे पैर से कुचल दो-

त्वं तस्य द्वयाविनोऽघशंसस्य कस्यचित्। पदाभितिष्ठ तपुषिम्।।

ऋ० १.४२.८

प्रजा-प्रजा ऐसी हो जो अनुशासन में रहे, सब प्रकार से राजा का सहयोग करे। नागरिक सभ्य एवं सुशिक्षित हों। विभिन्न प्रकार के ज्ञान वाले अर्थात् विशेषज्ञ हों जो सभी प्रकार से राष्ट्र को पुष्ट कर सकें। राज्य कर्मचारियों के कर्त्तव्य की एक झलक निम्नलिखित ऋचा में प्रस्तुत है-

ते हि वस्वो वसवानास्ते अप्रभूराः महोभिः। व्रता रक्षन्ते विश्वाहा।। ऋ० १.८०.२

'तेरे धन को सम्भाल कर रखने वाले सावधान होकर अपने तेज के द्वारा निरन्तर व्रत का पालन करते हैं।' मन्त्र में राजा के कर्मचारियों का आदर्श प्रस्तुत किया गया है। वे राष्ट्र की रक्षा किस प्रकार करें ? इस प्रकार के कर्त्तव्य का संकेत मिलता है। पहली बात तो यह है कि राष्ट्र की सम्पत्ति की रक्षा सबको करनी चाहिये। प्रत्येक नागरिक अपने को राष्ट्र का सेवक समझे। दूसरी बात है कि सभी तेजस्वी, ज्ञानी तथा जागरूक हों। तीसरी बात यह है कि राष्ट्र की समस्त योजनाओं को पूर्ण सहयोग प्रदान करें, संगठित होकर राष्ट्र-रक्षा का व्रत ग्रहण करें। राज्य की स्थिरता के सम्बन्ध में कुछ उपाय बताये गये हैं-

आ त्वाहार्षमन्तरेधि ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः।

विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मा त्वाद् राष्ट्रमधिभ्रंशतः।।

इहेवैधि मापच्योष्ठाः पर्वत इवाविचाचलि।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

thearyasamaj.org

वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द

-ले० खुशहाल चन्द्र आर्य एण्ड सन्स, 180 महात्मा गांधी रोड, कोलकत्ता

यह तो मैंने कई पुस्तकों में पढ़ा है कि मध्यकालिक साम्प्रदायिक आचार्यों जिनमें सायण, उव्वट व महीधर मुख्य हैं। इन्होंने वेद-मन्त्रों का भाष्य, मन्त्रों के देवता, छन्द, पद, पदार्थ व सन्दर्भ आदि की उपेक्षा करके मन्त्रार्थ को विनियोग के अनुसार भाष्य किया है जिससे अर्थ का अनर्थ हो गया है। जैसे वेदों में ''गौवध'' आया है। इन आचार्यों ने ''गौवध'' का सीधा अर्थ गौ का वध करके यज्ञों में डालना कर दिया। इसी अर्थ से यज्ञों में पशुबलि का प्रचलन हो गया जिससे महात्मा बुद्ध जैसे लोगों का ईश्वर, वेद और यज्ञों के प्रति श्रद्धा भाव उठ गया। महर्षि दयानन्द ने बताया कि गौ के कई अर्थ होते हैं। गाय के अतिरिक्त, सूर्य की किरण, इन्द्रियां, वाणी आदि को भी गौ कहा जाता है। यहां गौ का तात्पर्य इन्द्रियां हैं, यानि इन्द्रियों पर संयम रखना ''गौ वध'' होता है। इस प्रकार महर्षि दयानन्द ने वेदों की रक्षा की।

पूज्य आचार्य पंडित उमाकान्त जी उपाध्याय ने एक पुस्तक लिखी है, जिसका नाम है ''वेद और दयानन्द''। इस पुस्तक में आचार्य जी ने ''विनियोग'' को बहुत अच्छी प्रकार समझाया है। इस पुस्तक को पढ़कर मैंने भी विनियोग को काफी समझा है। अन्य पाठकगण भी इसको समझ पाए इसलिए उसी पुस्तक का एक अंश मैंने एक लेख के रूप में उदधृत किया है, वह इसी भांति है-

वेद और विनियोग-स्वामी दयानन्द ने वेदों के सम्बन्ध में प्रचलित अनेक भ्रमों, अन्धविश्वासों, ऐतिहासिक भूलों आचार्यों की मान्यताओं के विपरीत भाष्यों में भूलों का निराकरण किया है। वेद भाष्यों के सम्बन्ध में सायणाचार्य आदि मध्य काल के भाष्यकर्त्ता आचार्यों ने मन्त्रों के विनियोग के प्रसंग में भूल की है। आचार्य सायण, आचार्य उव्वट, आचार्य महीधर आदि ने विनियोगों के आधार पर मन्त्रों का अर्थ किया है। वेद में आए हुए मन्त्रों के पद, पदार्थ, देवता आदि का विचार करके अर्थ करना समीचीन होगा। किन्तु इन मध्यकालिक साम्प्रदायिक आचार्यों ने उनके समय में प्रचलित विनियोगों के आधार पर मन्त्रों के अर्थ किए हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि इन आचार्यों ने मन्त्रों के पद, पदार्थ, सन्दर्भ आदि सबकी उपेक्षा करके मन्त्रार्थ को विनियोग के अनुसार भाष्य किया। अब देखना यह है कि विनियोग है क्या और कैसे वह मन्त्रों के अर्थों को प्रभावित करता है।

विनियोग क्या है-विनियोग शब्द में वि+नि+योग हैं। योग शब्द है जिसका अर्थ है जुड़ना, मिलना, जोड़ना आदि। (युजिर योगों धातु हैं) वि और नि उपसर्ग हैं। वि का अर्थ है विशेष रूप से और नि का अर्थ है निश्चित रूप से। सो किसी मन्त्र को किसी कार्य में, किसी कर्मकाण्ड में विशेष प्रकार से निश्चित रूप से जोड़ लेना, उस मन्त्र का उस कर्मकाण्ड में विनियोग है। उदाहरण के लिए आर्य परम्परा में सोलह संस्कारों में कर्ण वेध एक संस्कार है। इस कर्णवेध संस्कार में शिशु के कान के निचले भाग ललरी को बींध दिया जाता है। उसमें छेद दिया जाता है। जिस समय कान में छिद्र किया जाता है उस समय निम्न मन्त्र का पाठ किया जाता है।

''भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षिभिः यजत्राः।

स्थिरैरङ्गैः स्तु ष्टुवासं सस्त नूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥''

-यजु० २५-२६

इसका तात्पर्य यह हुआ कि ''भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम'' इस मन्त्र का विनियोग कर्णवेध नामक संस्कार में हुआ है। सो विनियोग का अर्थ हुआ-किसी संस्कार में, किसी यज्ञकार्य में, किसी कर्मकाण्ड में, किसी अवसर विशेष पर, किसी मन्त्र का पाठ करना या उस मन्त्र को पढ़कर कोई कर्मकाण्ड करना या यज्ञ में आहुति डालना।

मध्यकालिक आचार्यों का मत-सायणाचार्य आदि मध्यकालिक आचार्य की मान्यता यह है कि मन्त्रों के भाष्य या अर्थ उनके विनियोग के अनुसार करना चाहिए। सो इन मध्यकालिक आचार्यों का सिद्धान्त हुआ कि अर्थ या भाष्य को मन्त्र के विनियोग का अनुगामी होना चाहिए।

स्वामी दयानन्द का मत-स्वामी दयानन्द का कहना है कि मन्त्रार्थ को विनियोग से स्वतन्त्र होकर उसके प्रकरण सन्दर्भ, पद, पदार्थ के अनुकूल करना चाहिए। इसका तात्पर्य यह हुआ कि मन्त्रार्थ अपने सन्दर्भ में विनियोग से स्वतन्त्र हैं और विनियोग मन्त्रार्थ का अनुगामी हो।

मध्यकाल के आचार्यों के मत में विनियोग स्वतन्त्र है और मन्त्रार्थ को विनियोग के पीछे चलना चाहिए। स्वामी दयानन्द की मान्यता है, मन्त्रार्थ अपने सन्दर्भ, पद, पदार्थ के अनुसार स्वतन्त्र रहना चाहिए और विनियोग मन्त्रार्थ का, मन्त्रों के अर्थों की भावनाओं के अनुकूल होना चाहिए। अर्थात् विनियोग को मन्त्रार्थ का अनुगामी होना चाहिए। मन्त्र के अर्थ के पीछे चलना चाहिए।

कर्ण वेध संस्कार में ''भद्रं कर्णेभिःशृणुयाम'' इत्यादि का विनियोग इसलिए है कि इस मन्त्रांश का अर्थ है कि हम (कर्णेभिः) कानों से भद्र सुने (शृणुयाम) किन्तु तब भूल हो जाती है जब हमारे भाष्यकार यह कहने लग जाते हैं कि यह मन्त्र है ही कर्ण वेध के लिए। मन्त्र में और भी अनेक कुछ है।

मन्त्र का पूरा अर्थ इस प्रकार है-हे यजत्रादेवाः। हे यजनीय, सत्करणीय, दिव्यगुण विशिष्ट परमेश्वर! हम कानों से भद्र सुने, आंखों से भद्र कल्याणकारी ही देखें। हम सुदृढ़ स्वस्थ अंगों से आपकी स्तुति करते हुए पूर्ण आयु को प्राप्त करें। इस मन्त्र में कानों से भद्र सुनने, आंखों से भद्र देखने और स्वस्थ दृढ़ अंगों से प्रभु परमेश्वर की प्रार्थना करते हुए पूर्ण आयु प्राप्त करने की प्रार्थना है। कान के छिद्र करने की तो कोई बात है ही नहीं। पाठक यह सहज अनुमान कर सकते हैं कि मन्त्र के अर्थ या भाष्य को मन्त्र के देवता, छन्द, पद, पदार्थ के अनुसार करना ही उचित है। मंत्रार्थ को विनियोग के पीछे चलाना या पद पदार्थ की उपेक्षा करके विनियोग के अनुसार अर्थ को तोड़ना मरोड़ना अन्याय है। मन्त्रार्थानुसार ही विनियोग उचित है, न कि विनियोग के अनुसार अर्थ! अन्ततः मन्त्र तो अपौरूषेय है, परमेश्वर ने मानव के कल्याणार्थ उन्हें प्रदान किया। किस मन्त्र में क्या पद है, कर्मकाण्ड और उनमें करणीय क्रियाएं, क्रियाओं में पठनीय मन्त्र, किस मन्त्र को पढ़कर कौन सी क्रिया की जाए, यह सब निर्णय-निर्धारण ऋषियों ने परवर्ती काल में किया है। चारों संहिताओं में बीस हजार से अधिक मन्त्र हैं। कोई भी मन्त्र कहीं भी नहीं पढ़ा जाता। कहाँ, किस धर्म में किस मन्त्र को पढ़ा जाए ? बीस हज़ार से अधिक मन्त्रों में से चुनना है, यह सब परवर्ती काल में ऋषियों ने निर्धारित किया है। उनके चुनने का आधार तो मनमानी हो नहीं सकता, कोई आधार तो होना ही चाहिए और वह आधार अर्थ को छोड़कर तो होना ही नहीं चाहिए। अतः अर्थ के आधार पर ही विनियोग होना उचित है। किसी भी मंत्र का कहीं भी विनियोग मनमानी करके फिर मन्त्रार्थ को विनियोग के अनुसार करना तो अनुचित है, अन्याय है। किन्तु दुर्भाग्य है कि सायण, महीधर आदि आचार्यों ने विनियोग के अनुसार मन्त्रों का अर्थ दिया है।

इस लेख से जान लिया गया कि मध्यकालीन आचार्यों ने जो वेद-भाष्य किये, वे गलत इसलिए हो गए कि उन्होंने मन्त्रों का केवल विनियोग देखकर ही भाष्य कर दिया, जबकि उनको मन्त्र का देवता, छन्द, पद, पदार्थ व सन्दर्भ यानि किस प्रकरण में यह मन्त्र लिखा गया है। यदि यह देखकर भाष्य करते तो उनका भाष्य भी गलत नहीं होता पर महर्षि दयानन्द ने सब बातों का ध्यान रखते हुए, अपने वेद-भाष्य किये हैं। इसलिए वे सही व उत्तम हैं और तर्क व विज्ञान की कसौटी पर खरे उतरते हैं। यह महर्षि का मनुष्य-मात्र पर एक अनुपम उपकार है, इसलिए महर्षि को वेदोद्धारक माना गया है।

hearyasamaj.org

पृष्ठ 2 का शेष-ईश्वर, वेद, महर्षि दयानन्द...

यद्यपि स्वामी दयानन्द काशी शास्त्रार्थ वाले दिन विजयी रहे परन्तु वह इसके बाद भी 5 बार काशी गये, मूर्तिपूजा का वेदों से विधान दिखाने के विज्ञापन उन्होंने दिये परन्तु कोई सामने नहीं आया। अतः मूर्तिपूजा वेद विहित न होकर वेद विरूद्ध थी व है।

हम मूर्तिपूजा की असारता पर सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में स्वामी दयानन्द द्वारा प्रस्तुत विचार आगे उद्धृत कर रहे हैं जिससे समझदार लोगों को लाभ हो सकता है। स्वामी जी ने प्रश्न किया है कि मूर्तिपूजा कहां से चली। उनका उत्तर है कि जैनियों से चली। प्रश्न किया कि जैनियों ने कहां से चलाई ? इसका उत्तर उन्होंने दिया कि अपनी मूर्खता से। पुनः प्रश्न किया कि जैनी लोग कहते हैं कि शाश्वत ध्यानावस्थित बैठी हुई मूर्ति देख कर अपने जीव का भी शुभ परिणाम वैसा ही होता है। इसका उत्तर वह देते हैं कि जीव चेतन और मूर्ति जड़ है। क्या मूर्ति के सदृश जीव भी जड़ हो जायगा ? यह मूर्तिपूजा केवल पाखण्ड मत है जिसे जैनियों ने चलाया है। हम पाठकों से निवेदन करते हैं कि वह सत्यार्थ प्रकाश का मूर्तिपूजा का पूरा प्रकरण पढ़कर लाभान्वित हों। इसी समुल्लास में स्वामी दयानन्द ने मूर्तिपूजा के 16 दोष गिनायें हैं। पहला दोष यह है कि साकार मूर्ति में मन स्थिर कभी नहीं हो सकता क्योंकि उस को मन झट ग्रहण करके उसी के एक-एक अवयव में घूमता है और दूसरे में दौड़ जाता है। और निराकार अनन्त परमात्मा के ग्रहण में यावत्सामर्थ्य मन अत्यन्त दौड़ता है तो भी अन्त नहीं पाता। ईश्वर निरवयव होने से चंचल भी नहीं रहता किन्तु उसी के गुण, कर्म, स्वभाव का विचार करता-करता आनन्द में मग्न होकर स्थिर हो जाता है। और जो साकार में स्थिर होता तो सब जगत् का मन स्थिर हो जाता क्योंकि जगत् में मनुष्य, स्त्री, पुत्र, धन, मित्र आदि साकार में फंसा रहता है परन्तु किसी का मन स्थिर नहीं होता, जब तक कि निराकार ईश्वर में मन को न लगावे। क्योंकि निरवयव ईश्वर के होने से उस में मन स्थिर हो जाता है। इसलिये मूर्तिपूजा करना अधर्म है। दूसरा-उस में करोड़ों रूपये मन्दिरों में व्यय करके दरिद्र होते हैं और उस में प्रमाद होता है। तीसरा-स्त्री पुरूषों का मन्दिरों में मेला होने से व्यभिचार, लड़ाई-बखेड़ा और रोगादि उत्पन्न होते हैं। चौथा-उसी को धर्म, अर्थ, काम और मुक्ति का साधन मानके पुरूषार्थ रहित होकर मनुष्य जन्म व्यर्थ गवांता है। पांचवां-नाना प्रकार की विरूद्ध-स्वरूप नाम चरित्रयुक्त मूर्तियों के पुजारियों का ऐक्यमत नष्ट हो के विरूद्धमत में चल कर आपस में फूट बढ़ा के देश का नाश करते हैं। छठा-उसी के भरोसे में शत्रु का पराजय और अपना विजय मान बैठे रहते हैं। उनका पराजय होकर राज्य, स्वातन्त्रय और धन का सुख उनके शत्रुओं के स्वाधीन होता है और आप पराधीन भटियारे के टट्टू और कुम्हार के गधे के समान शत्रुओं के वश में होकर अनेकविध दुःख पाते हैं। सातवां-जब कोई किसी को कहे कि हम तेरे बैठने के आसन व नाम पर पत्थर धरें तो जैसे वह उस पर क्रोधित होकर मारता वा गाली देता है वैसे ही जो परमेश्वर की उपासना के स्थान हृदय और नाम पर पाषाणादि मूर्तियां धरते हैं, उन दुष्टबुद्धियों का सत्यानाश परमेश्वर क्यों न करें ? आठवां-भ्रान्त होकर मन्दिर-मन्दिर देश-देशान्तर में घूमते-घूमते दुःख पाते, धर्म, संसार और परमार्थ का काम नष्ट करते, चोर आदि से पीड़ित होते और ठगों से ठगाते रहते हैं।

नवमां-दुष्ट पुजारियों को धन देते हैं, वे उस धन को वैश्या, परस्त्रीगमन, मद्य, मांसाहार, लड़ाई-बखेड़ों में व्यय करते हैं जिस से दाता का सुख का मूल नष्ट होकर दुःख होता है। दसवां-माता-पिता आदि माननीयों का अपमान कर पाषाणादि मूर्तियों का मान करके कृतघ्न हो जाते हैं। ग्यारहवां-उन मूर्तियों को कोई तोड़ डालता या चोर ले जाता है तब हा-हा करके रोते रहते हैं। बारहवां-पुजारी परस्त्रियों के संग और पुजारिन परपुरूषों के संग से प्रायः दूषित होकर स्त्री-पुरूष के प्रेम के आनन्द को हाथ से खो बैठते हैं। तेरहवां-स्वामी सेवक की आज्ञा का पालन यथावत् न होने से परस्पर विरूद्ध-भाव होकर नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं। चौदहवां-जड़ का ध्यान करने वाले का आत्मा भी जड़ बुद्धि हो जाता है क्योंकि ध्येय का जड़त्व धर्म अन्तःकरण द्वारा आत्मा में अवश्य आता है। पन्द्रहवां-परमेश्वर ने सुगन्धियुक्त पुष्पादि पदार्थ वायु व जल के दुर्गन्ध निवारण और आरोग्यता के लिये बनाये हैं, न कि पुजारी जी द्वारा तोड़ताड़ के दुर्गन्ध निवारण और आरोग्यता के लिये बनाये हैं। उन को पुजारी जी तोड़ताड़ कर, न जाने उन पुष्पों की सुगन्धि कितने दिन तक आकाश में चढ़ कर वायु जल की शुद्धि करता और पूर्ण सुगन्धि के समय तक उस का सुगन्ध होता है, उस का नाश मध्य में ही कर देते हैं। पुष्पादि कीचड़ के साथ मिल सड़ कर उलटा दुर्गन्ध उत्पन्न करते हैं। सोलहवां-पत्थर पर चढ़े हुए पुष्प, चन्दन और अक्षत आदि सब का जल आकाश में चढ़ता है कि जितना मनुष्य के मल का। और सहस्रों जीव उस में पड़ते व उसी में मरते और सड़ते हैं। ऐसे-ऐसे अनेक दोष मूर्तिपूजा के हैं जो सज्जन लोगों को त्याग देने योग्य हैं। और जिन्होंने पाषाणमय मूर्ति की पूजा की है, करते हैं और करेंगे, वे पूर्वोक्त दोषों से न बचे, न बचते हैं और न बचेंगे। यह प्रकरण सत्यार्थ प्रकाश में आगे भी जारी है परन्तु इसे हम यहीं समाप्त करते हैं। इस लम्बे उदाहरण से हमें मूर्तिपूजा से होने वाली हानियां विदित हो गई है। ज्ञानी व बुद्धिमान लोग इसे जान व समझकर मूर्तिपूजा से बचेंगे तो उनका कल्याण व उन्नति होगी, यह सुनिश्चित है।

मूर्तिपूजा क्या है ? मूर्तिपूजा में एक मूर्ति होती जिसे ईश्वर का स्थानापन्न कहा जाता है। ईश्वर कहां है, कैसा है, क्या करता है, उसकी मूर्ति बन सकती है या नहीं, उसका स्वरूप कैसा है आदि, इन प्रश्नों की उपेक्षा करके पाषाण, मृत्तिका या धातु की मूर्ति बनाई जाती है। फिर हमारे पण्डितजी कुछ संस्कृत के श्लोकों व मन्त्रों का पाठ करके पूजा कराते हैं और कहा जाता है कि मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा हो गई है, अब यह मूर्ति साक्षात ईश्वर या देवता है। सब उस मूर्ति की पूजा करना आरम्भ कर देते हैं। जब कि प्राण प्रतिष्ठा का होना कथन मात्र है। किसी मूर्ति में प्राण-प्रतिष्ठा हो ही नहीं सकती। ईश्वर भी नहीं कर सकता क्योंकि यह असम्भव है। प्राण प्रतिष्ठा करना एक ढ़ोंग से अधिक कुछ नहीं है। ईश्वर मनुष्य व प्राणियों के शरीरों में जन्म से पूर्व प्राणों को प्रतिष्ठित करता है। यह कार्य ईश्वर ही करता है मनुष्य इसे कदापि नहीं कर सकता। मूर्तिपूजा में ईश्वर की मूर्ति व उसकी आकृति कैसी हो ? वह तो ईश्वर के अनुरूप होनी चाहिये। ईश्वर के निराकार होने से उसकी आकृति होती ही नहीं है। अतः इन्हें विगत 2000 वर्षों में एक मान्यता घड़नी पड़ी कि मर्यादा पुरूषोत्तम राम, योगेश्वर श्री कृष्ण, कैलाश पर्वत पर निवास करने वाले राजा शिवजी आदि ईश्वर के अवतार थे। इन्हें अवतार घोषित करने वाले पण्डितजी को किसने बताया कि यह सभी अवतार थे, तो कोई उत्तर किसी के पास नहीं है। इस प्रश्न से भी किसी को कोई सरोकार नहीं है कि ईश्वर के नाम पर उसकी मूर्ति बनाकर पूजा करना ईश्वर को पसन्द है या नहीं। भले ही ईश्वर मूर्तिपूजा को बुरा माने, परन्तु मूर्तिपूजा करने वालों के लिए प्रश्न अनावश्यक एवं गौण है। मूर्तिपूजक तो आंख, नाक व कान बन्द कर मूर्तिपूजा करेगा, उसे कोई रोक नहीं सकता, ऐसा ही चल रहा है। जिसका परिणाम हमने एक हजार वर्ष से अधिक की गुलामी के रूप में भोगा है। यदि अवतारवाद पर विचार करें तो यह भी तर्क व युक्ति आदि प्रमाणों के विरूद्ध सिद्ध होता है। सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान व निराकार ईश्वर अवतार क्यों लेता है ? इसका कोई सन्तोषजनक उत्तर मूर्तिपूजा के मानने वालों के पास नहीं है। ईश्वर सर्वशक्तिमान होने से वह सारे कार्य अपने निराकार स्वरूप में स्थित रहकर कर सकता है। आज भी कर रहा है। सारे ब्रह्माण्ड को उसने उत्पन्न किया व रचा है। इसका धारण विगत लगभग 2 अरब वर्षों से किया हुआ है। सारे ब्रह्माण्ड का संचालन भलीभांति वह निराकार स्वरूप में स्थित रहकर कर रहा है। अतः उसे अवतार लेने की कोई आवश्यकता नहीं है। रावण व कंस को मारने का जहां तक प्रश्न है तो उसके बाद भी अनेक भयंकर निरंकुश राजा देश व विदेश में हो चुके हैं। वह अपने कर्मों से व ईश्वरीय व्यवस्था से मरते रहे हैं और आगे भी ऐसा ही होता रहेगा। इसके लिए ईश्वर को अवतार लेने की कोई आवश्यकता नहीं है। अंग्रेजों का भारत में राज्य था। रावण व कंस के अस्तित्व से कहीं अधिक विकट समस्या थी।

(क्रमशः)

thearyasamaj.org

डा. धर्मवीर कपूर नहीं रहे

आर्य समाज कमालपुर होशियारपुर के वरिष्ठ संरक्षक डा. धर्मवीर कपूर का दिनांक 17-06-2014 (शनिवार) को निधन हो गया। दिनांक 22-06-14 को आर्य समाज कमालपुर के "दयानन्द हाल में शोक सभा का आयोजन किया गया। उपस्थित आर्य जनों ने अपनी संवेदना व्यक्त की और श्रद्धांजलि भेंट की। डा. धर्मवीर कपूर निष्ठावान आर्य समाजी थे और वे नगर की आर्य व डी.ए.वी संस्थाओं से जुड़े रहे। वे नगर के प्रसिद्ध समाजसेवी के रूप में कार्य करते रहे, उसके अतिरिक्त वे अखिल भारतीय कैमिस्ट एसोसिऐशन के अध्यक्ष रहे। वे अपने पीछे सम्पन्न आर्य परिवार छोड़ गये, उनके सुपुत्र श्री अश्विनी कपूर प्रसिद्ध पत्रकार (पंजाब केसरी) और श्री रमन कपूर अपने परिवार और समाज की सेवा कर रहे है। परम पिता परमेश्वर से उनकी शान्ति और सदगति के लिए प्रार्थना की गई।

-यशपाल वालिया मन्त्री

आर्य दैनन्दिनी-2015 (डायरी)

जैसा कि आप सभी को विदित है कि आर्य प्रकाशन हर वर्ष आर्य दैनन्दिनी का प्रकाशन करता है तथा उसमें संन्यासी, विद्वान्, विदुषी, भजनोपदेशक तथा गुरुकुलों के नाम, दूरभाष नम्बर प्रकाशित करता है। अत: आपसे निवेदन है कि आप अपने नाम के साथ दूरभाष व अपना पता भेजें, जिससे कि सही नम्बर प्रकाशित हो सके। कई विद्वानों के नम्बर बदल गये हैं, अत: आप सभी से निवेदन है कि आप सब अपना नया नम्बर और पता भेजें।

यह आप 30 अगस्त 2014 तक भेजने की कृपा करें। ताकि उसे भली प्रकार आर्य दैनन्दिनी में प्रकाशित किया जा सके।

संजीव आर्य (प्रबन्धक) आर्य प्रकाशन, 814 कूण्डेवालान, अजमेरी गेट, दिल्ली-110006

महर्षि दयानन्द मठ जालन्धर का श्रावणी उत्सव

महर्षि दयानन्द मठ (वेद मंदिर) ढन मुहल्ला जालन्धर का वेद सप्ताह (श्रावणी सप्ताह) सोमवार 14 जुलाई से रविवार 20 जुलाई 2014 तक बड़ी धूमधाम और उत्साह से मनाया जा रहा है। इस श्रावणी सप्ताह में आर्य जगत के प्रसिद्ध उच्चकोटि के विद्वान आचार्य वेद प्रकाश श्रोत्रिय देहली से पधार रहे हैं। यज्ञ के ब्रह्मा श्री वेद प्रकाश जी श्रोत्रिय होंगे और प्रतिदिन प्रात: यज्ञ और सायं वेद कथा करेंगे। इस अवसर पर भजन श्री राजेश प्रेमी जी के होंगे। इस श्रावणी सप्ताह में वेद पाठ श्री सुरेश शास्त्री जी, श्री संदीप शास्त्री जी एवं गुरुकुल करतारपुर के ब्रह्मचारी करेंगे। सभी धर्म प्रेमी सज्जनों से निवेदन है कि वह इस अवसर पर धर्म लाभ उठावें।

-कुन्दन लाल अग्रवाल प्रधान दयानन्द मठ

पुरोहित की आवश्यकता

आर्य समाज औहरी चौक बटाला के लिए एक सुयोग्य पुरोहित की आवश्यकता है जो वैदिक रीति रिवाज अनुसार यज्ञ एवं अन्य संस्कार करवा सके। वेतन योग्यतानुसार दिया जाएगा। विद्यार्थियों को संस्कृत पढ़ाने वाले को प्राथमिकता दी जाएगी। निवास की निशुल्क व्यवस्था होगी।

-प्रविन्द्र चौधरी प्रधान आर्य समाज, औहरी चौक बटाला

आर्य समाज मुहल्ला गोबिन्दगढ़ जालन्धर का वेद सप्ताह

आर्य समाज मुहल्ला गोबिन्दगढ़ जालन्धर का वेद सप्ताह 10 अगस्त से 17 अगस्त 2014 तक बड़ी धूमधाम और हर्षोल्लास के साथ मनाया जा रहा है। इस अवसर पर 10 अगस्त से 17 अगस्त तक पंडित सुन्दर लाल जी शास्त्री के वेद प्रवचन होंगे और आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के भजनोपदेशक श्री जगत वर्मा जी के मधुर भजन होंगे। सभी धर्मप्रेमी सज्जनों से निवेदन है कि वह इस अवसर पर धर्म लाभ उठावें।

-इन्द्र कुमार शर्मा आर्य समाज, मुहल्ला गोबिन्दगढ़ जालन्धर

सूरज

-ले० श्री अशोक पक्ष्मी जी एडवोकेट रजिस्ट्रार आ० वि० प० पंजाब

उगना नित्य सूरज का चीरना अन्धकार
करना जग को ज्योतिर्मय संजोता नव विचार

यह कैसा क्रियाचक्र है उठना, खाना
कमाना सोना ? प्रश्न यही झकझोरता,

बनता चिन्तन आधार क्यों नहीं बन सकता रवि मैं ?
क्यों नहीं मैं दे सकता मफलसों को खुशियों का प्रकाश ?

क्या अपने लिए ही काफी है जीना ? क्यों नहीं मुझे
होता सूर्य गुण का आभास ? सूरज न सही

क्या मैं नहीं बन सकता नन्हा दीपक
भस्म कर स्वयं को दे थोड़ा प्रकाश।

पृष्ठ 4 का शेष-वैदिक राष्ट्र

इन्द्र इवेह ध्रुवस्तिष्ठेह राष्ट्रमुधारय।।

ध्रुवं ते राजा वरूणो ध्रुवं देवो बृहस्पतिः।

ध्रुवं त इन्द्रश्चाग्निश्च राष्ट्रं धारयतां ध्रुवम्।।

ऋ० १०.१.७३.१, २, ५

'हे राजन् मैं तुम्हें राष्ट्र के अन्दर ले चलता हूँ, तुम्हें राज्याधिकार सौंपता हूँ। स्थिर होकर कार्य करो, चलायमान न होवो। सारी प्रजा तुम्हें चाहती है और तुम्हारा राष्ट्र अधिकार से न निकले। इस राष्ट्र के कार्यों को ही करो, इससे पतित न होवो। पर्वत के समान अचल होकर राष्ट्र को धारण करो। तुम्हारे राष्ट्र को ईश्वर, विद्वान्, इन्द्र और अग्नि अटल बनावें।'

उक्त मन्त्रों में राजा के लिये निर्देश है कि वह पक्का इरादा लेकर अपने कर्त्तव्यों में अडिग रहे। राजा को चञ्चलवृत्ति नहीं होना चाहिये। उसकी योजनाओं में स्थिरता हो, किसी प्रकार की शिथिलता न आने पावे। अपने अधिकार का ठीक प्रकार से उपयोग करे। किसी से परास्त न हो तथा व्यस्तता से भयभीत होकर राष्ट्र के कार्यों से विमुख न हो। यदि एकछत्र शासन हो तभी सफलता सम्भव है-

असपत्नः सपत्नहाभि राष्ट्रों विषासहिः।

यथाहमेषां भूतानां विराजानि जनस्य च।।

-ऋ० १०.१७४.५

शत्रुओं से रहित, शत्रुओं को मारने वाला, पूर्ण रूपेण अपने राष्ट्र का स्वामित्व करने वाला, विशेष रूप से शत्रुओं को पराजित करने वाला, जिस प्रकार मैं हो जाऊँ तथा इन राष्ट्रवासियों में विराजमान हो जाऊँ, सब जनों का सम्मान भी प्राप्त करूँ।' राष्ट्र का नायक निर्द्वन्द्व होकर कार्य करे, उसके कार्य में व्यवधान प्रस्तुत न हो, शत्रु के आक्रमण की आशङ्का भी न हो तो वह अच्छी तरह से कार्य कर सकता है अत: कार्यक्षेत्र निरापद होना आवश्यक है। राजा और राष्ट्र की रक्षा के लिये एक बात और बताई है कि राजा विद्वानों के बताये मार्ग पर चले-

हस्तेनैव ग्राह्य आधिरस्या ब्रह्मजायेयमिति चेदवोचन्।

न दूताय प्रह्ये तस्थ एषा तथा राष्ट्रं गुपितं क्षत्रियस्य।।

ऋ० १०.१०८.३

ब्राह्मण की वाणी का अधिकार केवल हाथ से ही अर्थात् संकेतमात्र से ही ग्रहण किया जाना चाहिये। जो कुछ भी विद्वान् निर्देश करे उसे स्वीकार करना ही ठीक है। यह दूत अथवा प्रेरक के लिये स्थित नहीं है अर्थात् विद्वान् के परामर्श में शंका-सन्देह आदि नहीं होना चाहिये। जो राजा ऐसा करता है उसका राष्ट्र सुरक्षित रहता है। ब्राह्मण की वाणी पर बल से अधिकार न किया जाय और न उपेक्षा ही होनी चाहिये। राजा-प्रजा-कर्मचारी-मार्गदर्शक-विद्वान्-नीतिमान् ये सभी लोग शुद्ध हृदय से राष्ट्र के लिये समर्पित हो जायें तो राष्ट्र का वास्तविक स्वरूप दृष्टिगोचर होगा।

thearyasamaj.org

वेदवाणी

आश्चर्य

विधुं दद्राणं समने बहूनां युवानं सन्तं पलितो जगार।
देवस्य पश्य काव्यं महित्वाद्या ममार स ह्यः समान।।

-ऋ.10/55/5, अथर्व. 9/109

विनय-हे मनुष्यों! यह आश्चर्य देखो कि जवान को बुड्ढा निगल जाता है। उस पराक्रमी जवान को जोकि रणस्थली में बहुतों को मार भगाने वाला है, जो बड़े-बड़े विविध कर्म करने वाला है, ऐसे जवान को ये न जाने कब का बुड्ढा, सफेद बालों वाला बुड्ढा निगल जाता है। मनुष्यो! तुमने बेशक बहुत से मनुष्यकृत किताबी और काल्पनिक काव्य पढ़े होंगे, पर आज तनिक इस जीते-जागते सामने होते हुये देव के महान काव्य को भी देखो, तनिक इस महाकाव्य के भी पन्ने पलटो और पढ़ो जिसमें लिखा है कि जो अभी कल जी रहा था वह आज मरा पड़ा है। बस इस दिव्य महाकाव्य में यही लिखा हुआ है।

भाई! क्या तुमने उस जवान को निगलने वाले बुड्ढे को पहचाना? क्या तुम अपनी आंखों के सामने इस दिव्य-काव्य को नहीं देख रहे? क्या देखते हो कि दुनिया में प्रतिदिन जो हजारों (एक क्षण पहले तक दूसरों को मार भगाने की शक्ति का गर्व रखते हुए) आदमी मर रहे हैं, उन्हें कौन निगल रहा है? यदि नहीं देखते, तो वेद की किताब में यह पढ़ लेने पर कि आत्मा अपने में प्राणों और इन्द्रियों को प्रतिदिन निगलता है, आदित्य शक्ति चन्द्रमस् को निगलती है और परम बुड्ढा कालरूप परमेश्वर एक दिन इस सब बड़े वेग से क्रियाशील, अगम्, महान् ब्रह्माण्ड को (इस चलते फिरते नौजवान संसार को) भी निगल लेता है तो यह पढ़ लेने पर भी नहीं देखोगे, यदि तुम्हें यह सहस्रों चतुर्युगियों वाला कल्पान्त संसार ब्रह्मा का केवल एक दिन नहीं नजर आता जोकि उसके अगले ही दिन-उसके कल में ही-मरा पड़ा है और यदि तुम्हें इस जगत की एक एक घटना इसकी क्षणभंगुरता को नहीं दिखाती। तो तुम्हें वह देव ही एक दिन अपना महत्वाकांक्षी काव्य पढ़ाएगा और तुम्हें पदार्थ-पाठ देगा-कल जो जीता था वह आज मरा पड़ा है।

भाई! देव के इस संसार में आकर यदि हम केवल इस अनित्यता को ही सचमुच जान जाएं केवल यह पाठ पढ़ लें और अतएव कम से कम अपने बल का, नौजवानी का, कर्म शक्ति का और दूसरों को मार भगा सकने का घमण्ड छोड़ दें तो बस, यह पर्याप्त है, तब हमने सब काव्य पढ़ लिये और पढ़ाई का फल पा लिया।

साभार-वैदिक विनय, प्रस्तुति-रणजीत आर्य

श्री सुदर्शन शर्मा जी गौशाला पिंजरापोल की कमेटी के चेयरमैन बनें

गौ माता की सेवा और रक्षा के उद्देश्य के लिए गौशाला पिंजरापोल जालन्धर की कमेटी का गठन किया गया। इस कमेटी का चेयरमैन आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान तथा एच.आर. इंटरनैशनल के एम.डी. श्री सुदर्शन शर्मा जी को सर्वसम्मति से बनाया गया। चेयरमैन का पदभार संभालते हुए श्री सुदर्शन शर्मा जी ने कहा कि गौ माता की सेवा और रक्षा करना ही उनका लक्ष्य है और वह अपने दायित्व का निर्वाह करने के लिए सदा तत्पर रहेंगे तथा हर किसी से सहयोग लेकर चलेंगे। उन्होंने कहा कि गौमाता की सेवा सबसे पवित्र कार्य है। गौ माता की सेवा करने से सभी दुःखों से छुटकारा मिलता है। अगर सच्चे मन से गौमाता की सेवा की जाए तो परम आनन्द तो मिलता ही है साथ ही जीवन में हर प्रकार का सुख मिलता है। इस बैठक का आयोजन सोमवार को आर्य प्रतिनिधि सभा के स्व. हरबंस लाल शर्मा सभागार में किया गया। इस बैठक की अध्यक्षता दैनिक सवेरा के मुख्य संपादक श्री शीतल विज ने की।

गुरुकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

100 गुरुकुल शताब्दी

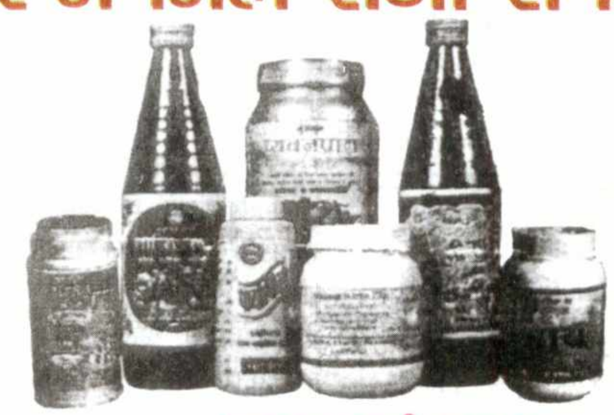

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट, रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि
दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे, मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताज़गी के लिए

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व थकान में अत्यंत उपयोगी।

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, जिला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिंटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। **E-mail: apspunjab2010@gmail.com**

आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।